युगों-युगों में बाहुबल (ऐतिहासिक सर्वेक्षण, कथा-विकास एवं समीक्षा)

डॉ० (श्रीमती) विद्यावती जैन

बाहुबली प्राच्य भारतीय वाङ्मय का अत्यन्त लोकप्रिय नायक रहा है। संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश, हिन्दी, कन्नड़, तमिल एवं तेलगु भाषाओं में विविध कालों की विविध शैलियों में उसका सरस एवं काव्यात्मक चित्रण मिलता है। इन ग्रन्थों में उपलब्ध चरित के अनुसार वे युगादिदेव ऋषभदेव के द्वितीय पुत्र थे जो आगे चलकर पोदनपुर नरेश के रूप में प्रसिद्ध हुए। उनकी राजधानी तक्षशिला थी। उनके सौतेले भाई भरत चक्रवर्ती जब दिग्विजय के बाद अपनी पैतृक राजधानी अयोध्या लौटे तब उनका चक्ररत्न अयोध्या में प्रविष्ट न होकर नगर के बाहर ही अटक गया। उनके प्रधानमंत्री ने इसका कारण बतलाते हुए उनसे कहा कि "भरत की दिग्विजय यात्रा अभी समाप्त नहीं हो सकी है, क्योंकि बाहुबली ने अभी तक उसका अधिपतित्व स्वीकार नहीं किया है। उस अहंकारी को पराजित करना अभी शेष ही है।" महाबली भरत यह सुनकर आग-बबूला हो उठते हैं तथा वे तुरन्त ही अपने दूत के माध्यम से बाहुबली को अपना अधिपतित्व स्वीकार करने अथवा युद्ध भूमि में मिलने का संदेश भेजते हैं।

२१ वें कामदेव के रूप में प्रसिद्ध बाहुबली जितने सुन्दर थे उतने ही बलिष्ठ, कुशल, पराक्रमी एवं स्वाभिमानी भी। वे भरत की चुनौती स्वीकार कर संग्राम-भूमि में उनसे मिलते हैं और अनावश्यक नर-संहार से बचने के लिए वे भरत के सम्मुख दृष्टि युद्ध, जल युद्ध एवं मलयुद्ध का प्रस्ताव रखते हैं। भरत के स्वीकार कर लेने पर उसी क्रम से युद्ध होता है और उनमें भरत हार जाते हैं। अपनी पराजय से क्रोधित होकर भरत बाहुबली की प्राण-हत्या के निमित्त उन पर अपना चक्र रत्न छोड़ते हैं, किन्तु चक्ररत्न नियमतः प्रक्षेपक के वंशजों की किसी भी प्रकार की हानि नहीं करता, अतः वह वापिस लौट आता है। बाहुबली अपने भाई के इस अमर्यादित एवं अनैतिक कृत्य से ग्लानि से भर उठते हैं और सांसारिक व्यामोह का त्याग कर दीक्षित हो जाते हैं। उपलब्ध बाहुबली-चरितों की यही संक्षिप्त रूपरेखा है। इसी कथानक का चित्रण विविध कवियों ने अपनी-अपनी अभिरुचियों एवं शैलियों के अनुसार किया है। इस विषय पर शताधिक कृतियों का प्रणयन किया गया है, उनमें से जो ज्ञात एवं प्रकाशित अथवा अप्रकाशित कुछ प्रमुख कृतियां उपलब्ध हैं, उनका संक्षिप्त परिचय यहां प्रस्तुत किया जा रहा है।

शौरसेनी-आगम-साहित्य में **अष्टपाहुड** साहित्य अपना प्रमुख स्थान रखता है। इसके प्रणेता आचार्य **कुन्दकुन्द** दिगम्बर जैन परम्परा के आद्य आचार्य एवं कवि माने गए हैं। उन्होंने दर्शन सिद्धान्त, आचार एवं अध्यात्म सम्बन्धी साहित्य का सर्वप्रथम प्रणयन कर परवर्ती आचार्यों के लिए दिशादान किया। कुन्दकुन्द कृत षट्पाहुड़ के टीकाकार श्रुतसागरसूरि ने उनके पद्मनन्दी, कुन्दकुन्दाचार्य, वक्रग्रीवाचार्य, एलाचार्य एवं गृद्धपिच्छाचार्य नाम भी बतलाए है।[१] नन्दिसंघ से सम्बद्ध विजयनगर के एक शिलालेख में भी कुन्दकुन्द के उक्त पाँच अपर नामों के उल्लेख हैं।[२] उक्त शिलालेख वि० सं० १४४३ का है। श्रुतसागरसूरि ने इन्हें विशाखाचार्य का परम्परा-शिष्य माना है।[३] प्रोफेसर हॉर्नले ने उन्हें नन्दिसंघ की पट्टावलियों के आधार पर विक्रम की प्रथम सदी का आचार्य स्वीकार किया है।[४] उनके अनुसार कुन्दकुन्द वि० सं० ४९ में आचार्य पद पर प्रतिष्ठित हुए। ४४ वर्ष की आयु में उन्हें आचार्य पद मिला, ५१ वर्ष १० माह तक वे इस पद पर बने रहे और उनकी कुल आयु ९५ वर्ष १० माह १५ दिन की थी।[५] प्रो० ए० चक्रवर्त्ती ने भी इस मत का समर्थन किया है।[६] इस प्रकार सिद्ध होता है कि जैन परम्परा में आचार्य कुन्दकुन्द का साहित्य सर्वप्रथम लिखित साहित्य के रूप में उपलब्ध है। उनकी रचनाओं में से निम्नकृतियां प्रसिद्ध एवं प्रकाशित हैं :—

१-२. दे० कुन्दकुन्दभारती (फल्टण, १९७०), प्रस्तावना पृ० ४,
३. वही पृ० ५.
४-६. वही पृ० ६.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पञ्चास्तिकाय, समयसार, प्रवचनसार नियमसार, अष्टपाहुड (दंसणपाहुड चरित्तपाहुड, सुत्तपाहुड, बोधपाहुड, भावपाहुड, मोक्खपाहुड, सीलपाहुड, एवं लिंगपाहुड) वारसाणुवेक्खा और भक्त संग हो। इनमें से आचार्य कुन्दकुन्द ने अपने **भावपाहुड** की गाथा सं० ४४ में सर्वप्रथम बाहुबली की चर्चा की और लिखा कि—"हे धीर-वीर, देहादि के सम्बन्ध से रहित किन्तु मान-कषाय से कलुषित बाहुबली स्वामी कितने काल तक आतापन योग से स्थित रहे ?[१] वस्तुतः बाहुबली चरित का यही आद्यरूप उपलब्ध होता है। यह कह सकना कठिन है कि कुन्दकुन्द ने किस आधार पर बाहुबली को अहंकारी कहा तथा उससे पूर्व वे क्या थे तथा आतापन योग में क्यों स्थित रहे ? प्रतीत होता है कि कुन्दकुन्द के पूर्व कोई ऐसा कथानक प्रचलित अवश्य था, जिसमें बाहुबली का इत्तिवृत्त लोक-विश्रुत था और आचार्य कुन्दकुन्द ने उसे मान-कषाय के प्रतिफलके एक उदाहरण के रूप में यहां प्रस्तुत किया। परवर्ती बाहुबली चरितों के लेखन के लिए उक्त उक्ति ही प्रेरणा स्रोत प्रतीत होती है।

आचार्य **विमलसूरि** कृत **पउमचरियं**[२] के चतुर्थ उद्देशक में "लोकट्ठिइ उसभमहाणाहियारो" नामक प्रकरण में भरत-बाहुबली संघर्ष की चर्चा हुई है। कवि ने उसकी गाथा सं० ३६ से ५५ तक कुल २० गाथाओं में उक्त आख्यान अंकित किया है। उसके अनुसार बाहुबली भरत का विरोधी था और वह उसकी आज्ञा का पालन नही करता था। अत: भरत अपनी सेना लेकर बाहुबली से युद्ध हेतु तक्षशिला जा पहुंचा। वहां दोनों की सेनाएँ जुझ जाती हैं। नरसंहार के बचने के लिए बाहुबली दृष्टि एवं मुष्टि युद्ध का प्रस्ताव रखते हैं। भरत उसे स्वीकार कर इन माध्यमों से युद्ध करता है, किन्तु उनमें वह हार जाता है। इस कारण क्रुद्ध होकर वह बाहुबली पर अपना चक्र फेंकता है। किन्तु वह भी उनका कुछ बिगाड नहीं पाता। भरत के इस व्यवहार से बाहुबली का मन विराग से भर जाता है और कषाययुद्ध के स्थान पर संयमयुद्ध अथवा परीषह-युद्ध के लिए वह सन्नद्ध हो जाता है।

आचार्य विमलसूरि का जीवन-वृत्तान्त अनुपलब्ध है। सुप्रसिद्ध जर्मन विद्वान हर्मन याकोबी ने विविध सन्दर्भों के आधार पर उनका समय २७४ ई० माना है।[३] यह भी अनुमान किया जाता है कि उन्होंने 'पूर्व साहित्य' की घटनाओं को सुनकर 'राघवचरित' नाम का भी एक ग्रन्थ लिखा था, जो अद्यावधि अनुपलब्ध है।

उक्त पउमचरियं जैन परम्परा की आद्य रामायण मानी जाती है। इसकी भाषा प्राकृत है। उसमें कुल ११८ पर्व (सर्ग) एवं उनमें कुल ८२६६ गाथाएँ हैं। उक्त ग्रन्थ को आधार मानकर आचार्य रविषेण ने अपने संस्कृत पद्मपुराण की रचना की थी।

तिलोयपण्णत्ती[५] शौरसेनी आगम का एक प्रमुख ग्रन्थ माना जाता है। उसमें बाहुबली का केवल नामोल्लेख ही मिलता है और उसमें उन्हें २४ कामदेवों में से एक कहा गया है।[६] उसमें यह भी बताया गया हैं कि ये कामदेव २४ तीर्थंकरों के समयों में ही होते हैं और अनुपम आकृति के धारक होते हैं।[७]

तिलोयपण्णत्ती के कर्त्ता जदिवसह (**यतिवृषभ**) का समय निश्चित नहीं हो सका है किन्तु विविध तर्क-वितर्कों के आधार पर उनका समय ई० की ५ वीं ६ वीं सदी के मध्य अनुमानित किया गया है।[८]

प्रस्तुत तिलोयपण्णत्ती ग्रन्थ दिगम्बर जैन परम्परानुमोदित विश्व के भूगोल तथा खगोल-विद्या और अन्य पौराणिक एवं ऐतिहासिक सन्दर्भों का अद्भुत विश्वकोष माना गया है। इस ग्रन्थ का महत्त्व इसलिए भी अधिक है कि ग्रन्थकार ने पूर्वागत परम्परा के विषयों की ही उसमें व्यवस्था की है, किन्हीं नवीन विषयों की नहीं।[९] अत: प्राचीन भारतीय साहित्य इतिहास एवं पुरातत्त्व की दृष्टि से यह ग्रन्थ मूल्यवान है। इसमें कुल ९ अधिकार तथा ५६५४ गाथाएं हैं। इसका सर्वप्रथम आंशिक प्रकाशन जैन सिद्धांत भवन आरा १० तथा तत्पश्चात् जीवराज ग्रन्थमाला शोलापुर से सर्वप्रथम अधुनातम सम्पादकीय पद्धति से हुआ है।

---

१. दे० कुन्दकुन्द भारती, भावपाहुड गाथा ४४ पृ० २६२.

२. पउमचरियं (वाराणसी, १९६२) ४/३६-५५ पृ० ३३-३५.

३—४. दे० पउमचरियं अंग्रेजी भूमिका पृ० १५.

५. जीवराज ग्रन्थमाला (सोलापुर, १९५१ १९५६) से दो खण्डों में प्रकाशित।

६—७. तिलोयपण्णत्ती ४/४७४ पृ० ३३७.

८. भारतीय संस्कृति के विकास में जैनधर्म का योगदान (डॉ० हीरालाल जैन) प्रकाशक—मध्यप्रदेश शासन साहित्य परिषद् भोपाल १९६२ पृ० ९९.

९. Tilogya-Pannatti of yativrsabha के नाम से प्रकाशत (१९४१ ई०)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अर्धमागधी आगम साहित्य एवं उनकी टीकाओं के अनुसार बाहुबली ऋषभदेव की द्वितीय पत्नी सुनन्दा के पुत्र थे, वे एवं सुन्दरी (पुत्री) युगल के रूप में जन्मे थे। उन्हें बहली का राज्य प्रदान किया गया था · उनकी राजधानी तक्षशिला थी। जब उन्होंने अपने भाई भरत का प्रभुत्व स्वीकार नहीं किया तब भरत ने उन पर आक्रमण कर दिया था। बाहुबली ने व्यर्थ के नरसंहार से बचने हेतु व्यक्तिगत युद्ध करने के लिए भरत को तैयार कर लिया। उन दोनों में नेत्रयुद्ध, वाग्युद्ध एवं मल्लयुद्ध हुए। उनमें पराजित होकर भरत ने बाहुबली पर चक्ररत्न से आक्रमण कर दिया। बाहुबली यद्यपि वीर-पराक्रमी थे, फिर भी भाई के इस कार्य से उन्हें संसार के प्रति घृणा उत्पन्न हो गई और उन्होंने दीक्षा लेकर कायोत्सर्ग मुद्रा में कठोर तपस्या की। उसमें वे इतने ध्यानमग्न थे कि पहाड़ी चीटियों ने बांबी बनाकर उनके पैरों को उसमें ढ़ंक लिया। इतना होने पर भी उन्हें जब कैवल्य की प्राप्ति नहीं हुई, तब उनकी बहिन ब्राह्मी और सुन्दरी ने उनका ध्यान उनके भीतर ही छिपे हुए अहंकार की ओर दिलाया। बाहुबली ने उसका अनुभव कर उसका सर्वथा परित्याग कर दिया और फलस्वरूप उन्हें कैवल्य की प्राप्ति हुई। बाहुबली के संसार त्याग करते समय भरत ने उनके पुत्र को तक्षशिला का राज्य प्रदान कर दिया। बाहुबली के शरीर की ऊँचाई ५०० धनुष थी। उनकी कुल आयु ८४ लाख पूर्व वर्ष थी।[१]

संघदासगणि ने अपनी **वसुदेवहिण्डी**[२] में "बाहुबलिस्स भरहेण सह जुज्झं दिक्खाणाणुप्पत्तीय" नामक प्रकरण में बाहुबली के चरित का अंकन किया है। उसका सारांश इस प्रकार है—

दिग्विजय से लौटकर भरत अपने दूत को बाहुबली के पास उनकी राजधानी तक्षशिला में भेजकर उन्हें अपनी सेवा में उपस्थित रहने का संदेश भेजते हैं। बाहुबली भरत के इस दुर्व्यवहार पूर्ण सन्देश को सुनकर आगबबूला हो उठते हैं। उनके अहंकार पूर्ण इस व्यवहार से क्रुद्ध होकर भरत ससैन्य तक्षशिला पर चढ़ाई कर देते हैं। बाहुबली और भरत वहां यह निर्णय करते हैं कि उनमें दृष्टियुद्ध एवं मुष्टियुद्ध हो। उन दोनों युद्धों में हारकर भरत बाहुबली पर चक्र से आक्रमण करते हैं। उसे देखकर बाहुबली कहते हैं कि मुझसे पराजित होकर मुझ पर चक्र से आक्रमण करते हो? यह सुनकर भरत कहते हैं कि मैंने चक्र नहीं मारा है। देव ने उस शस्त्र को मेरे हाथ से फिकवाया है। इसके उत्तर में बाहुबली कहते हैं कि तुम लोकोत्तम पुत्र होकर भी यदि मर्यादा का अतिक्रमण करोगे तो फिर सामान्य व्यक्ति कहाँ जायेंगे? अथवा इसमें तुम्हारा क्या दोष, क्योंकि विषय लोलुपी होने पर ही तुम ऐसा अनर्थ कर रहे हो। ऐसा विषय लोलुपी होकर मैं इस राज्य को लेकर क्या करूंगा? यह कहकर वे समस्त आरम्भों को त्यागकर योगमुद्रा धारण कर लेते हैं और तपस्या कर कैवल्य-प्राप्ति करते हैं।[३]

वसुदेवहिण्डी का अद्यावधि प्रथम खण्ड ही दो जिल्दों में प्रकाशित हैं। इनमें मे प्रथम जिल्द से ७ लम्भक (अध्याय) हैं। द्वितीय जिल्द में ८ से २८ वें लम्भक हैं किन्तु उनमें से १९—२० वें लम्भक अनुपलब्ध थे।[४] किन्तु अभी हाल में डा० जगदीश चन्द्र जैन (बम्बई) के प्रयत्नों से वे भी मिल चुके हैं।[५] उसके रचयिता श्री संघदासगणि हैं। इनका समय विवादास्पद है किन्तु कुछ विद्वानों का अनुमान है कि उनका समय ६ वीं सदी के पूर्व का रहा होगा।[६]

धर्मदासगणि ने अपनी **उपदेशमाला**[७] में 'बाहुबली दृष्टान्त' प्रकरण में बाहुबली एवं भरत की वही कथा निबद्ध की है, जो संघदासगणि ने वसुदेवहिण्डी में[८]। यद्यपि वसुदेवहिण्डी की अपेक्षा उपदेशमाला के कथानक में अपेक्षाकृत कुछ विस्तार अधिक है, फिर भी कथानक में कोई अन्तर नहीं। यदि कुछ अन्तर है भी तो वह यही कि उपदेशमाला का कथानक अलंकृत शैली में है जब कि वसुदेवहिण्डी

१. दे० Agmic Index Vol. I [Prakrit proper Names] Part II Ahmedabad 1970-72. p. 507-8
२. जैनआत्मानन्दसभा भावनगर (१९३०-३१ ई०) से प्रकाशित).
३. दे० वसुदेवहिण्डि पंचमलम्भक पृ० १८७.
४. दे० वसुदेवहिण्डि पृ० ३०८.
५. दे० Proceedings of the A.I.O.C. 28th session Karnataka University Nov. 1976 Page 104
६. दे० भारतीय संस्कृति में जैनधर्म का योगदान पृ० १४३
७. निर्ग्रन्थ साहित्य प्रकाशन संघ दिल्ली (१९७१ ई०) से प्रकासित
८. दे० उपदेशमाला पृ० ८०—९५

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

का कथानक संक्षिप्त एवं केवल विवरणात्मक। कुछ विद्वान् धर्मदासगणि को संघदासगणि के समान ही महावीर का सक्षात् शिष्य मानते हैं, किन्तु वह इतिहास समर्थित नहीं है। सम्भावना यह है कि वे संघदास के समकालीन अथवा किञ्चित् पश्चात्कालीन हैं। वसुदेवहिण्डी का उत्तरार्द्ध संघदासगणि की मृत्यु के बाद उन्होंने ही पूरा किया था।[1]

महाकवि **रविषेण** ने अपने संस्कृत **पद्मपुराण**[2] के चतुर्थ पर्व में बाहुबली का संक्षिप्त वर्णन किया है। उन्होंने बाहुबली को भरत का सौतेला भाई कहा है। उनके अनुसार बाहुबली अहंकारी था, अतः उसे चकनाचूर करने के लिए भरत अपनी चतुरंगिणी सेना लेकर पोदनपुर जाता है और बाहुबली से युद्ध करता है। युद्ध में अनेक प्राणियों के मारे जाने से दुखी होकर बाहुबली ने भरत से दृष्टियुद्ध, जलयुद्ध एवं बाहुयुद्ध, करने की प्रेरणा की जिसे भरत ने स्वीकार कर लिया किन्तु पराजित होकर उसने बाहुबली पर चक्ररत्न छोड़ दिया। चरमशरीरी होने के कारण वह चक्र बाहुबली का कुछ भी न बिगाड़ सका। किन्तु भरत के इस अमर्यादित कृत्य ने बाहुबली को सांसारिक भोगों से विरक्त बना दिया। उन्होंने तत्काल ही दीक्षा लेकर कठोर तपस्या की और मोक्ष लाभ लिया।[3]

आचार्य रविषेण का रचनाकाल उनकी एक प्रशस्ति के अनुसार बि० सं० ७३४ सिद्ध होता है।[4] इनके व्यक्तिगत जीवन परिचय की जानकारी के लिए सामग्री अनुपलब्ध है। इनके नाम के साथ सेन शब्द संयुक्त रहने से ऐसा प्रतीत होता है कि वे सेनगण-परम्परा के आचार्य रहे होंगे।[5]

रविषेण की एकमात्र कृति पद्मपुराण ही उपलब्ध है। इसका मूलाधार विमलसूरिकृत पउमचरियं है।[6] पद्मपुराण जैन संस्कृत साहित्य का आद्य महाकाव्य तो है ही साथ ही वह संस्कृत में दिगम्बर जैन परम्परा की रामकथा का भी सर्वप्रथम लिखित ग्रन्थरत्न है।

आचार्य **जिनसेन** (शक संवत् ७७०) कृत संस्कृत **आदिपुराण**[7] के १६-१७ वें पर्व में बाहुबली का वर्णन मिलता है। कथा के आरम्भ में बताया गया है कि बाहुबली का जन्म ऋषभदेव की दूसरी रानी सुनन्दा से हुआ। वे कामदेव होने के कारण अत्यन्त सुन्दर एवं पराक्रमी थे। योग्य होने पर उनका राजतिलक कर दिया गया। इसके बाद पुनः ३५ वें एवं ३६ वें पर्व के ४६१ श्लोकों में भरत एवं बाहुबली के ऐश्वर्य तथा वैभव का वर्णन है। बाहुबली द्वारा भरत की अधीनता स्वीकार नहीं किए जाने पर भरत अपनी विजय को अपूर्ण समझते हैं। अतः वे बाहुबली के पास अपने दूत के द्वारा प्रभुत्व स्वीकार कर लेने सम्बन्धी सन्देश भेजते हैं। किन्तु वे उसे अस्वीकार कर युद्धभूमि में निपट लेने को ललकारते हैं। भरत एवं बाहुबली युद्ध में भिड़ने की तैयारी करते हैं और निरपराध मनुष्यों का संहार बचाने के लिए वे धर्मयुद्ध प्रारम्भ करते हैं। उनके बीच जलयुद्ध, दृष्टियुद्ध एवं बाहुयुद्ध होता है। इन तीनों युद्धों में जब भरत पराजित हो जाता है तब वह बाहुबली पर चक्ररत्न का वार करता है। इस अनैतिक एवं अमर्यादित कार्य से बाहुबली को बड़ा दुख होता है। उन्हें ऐश्वर्य एवं भोगलिप्सा के प्रति घृणा उत्पन्न हो जाती है। अतः वे वैराग्यधारण कर कठोर तपश्चर्या करते हैं और कैवल्य की प्राप्ति करते हैं।

आदिपुराण में चित्रित बाहुबली का उक्त चरित ही सर्वप्रथम विस्तृत, सरस एवं काव्य शैली में लिखित बाहुबली चरित माना जा सकता है। कवि ने परम्परा-प्राप्त सन्दर्भों को विस्तार देकर कथानक को अलंकृत एवं सरस बनाया है।

महाकवि जिनसेन का समय विवादास्पद है किन्तु कुछ विद्वानों के अनुसार उनका काल ई० सन् ६६२ के आसपास माना जा सकता है।[8] जिनसेन की अन्य कृतियों में पार्श्वाभ्युदय, वर्धमानपुराण एवं जयधवला टीका प्रसिद्ध हैं। कृतियों के क्रम में आदिपुराण उनकी अन्तिम रचना थी। इसमें कुल ४७ पर्व हैं जिनमें प्रारम्भ के ४२ एवं ४३ वें पर्व के प्रथम ३ श्लोकों की रचना करने के बाद उनका स्वर्गवास हो गया। अतः उसके बाद के शेष पर्वों के १६२० श्लोकों की रचना उनके शिष्य गुणभद्र ने की थी।[9]

---

१. दे० वसुदेवहिण्डि—प्रस्ताविक पृ० ५.
२. भारतीय ज्ञानपीठ (काशी १९५८-५९) से तीन भागों में प्रकाशित
३. दे० पद्मपुराण पर्व ४।६७-७७.
४. दे० वही १२३।१८१. तथा भूमिका पृ० १९-२०.
५. दे० पद्मपुराण—प्रस्तावना—पृ० १९
६. दे० वही प्रस्तावना पृ० २२.
७. भारतीय ज्ञानपीठ (काशी १९६३-६८) से प्रकाशित
८. दे० पद्मपुराण—प्रस्तावना पृ० २१.
९. वही.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

महाकवि **पुष्पदन्त** ने अपने अपभ्रंश **महापुराण**[1] में "नाभेय चरित प्रकरण" में बाहुबली के चरित का अंकन मर्मस्पर्शी शैली में किया है। उसकी पांचवीं सन्धि में जन्म वर्णन करके कवि ने १६वीं से १८ वीं सन्धि तक बाहुबली का वर्णन जिनसेन के आदिपुराण के अनुसार ही किया है। पुष्पदन्त की वर्णनशैली जिनसेन की वर्णन-शैली से अधिक सजीव एवं सरस बन पड़ी है। पुष्पदन्त ने भरत दूत एवं बाहुबली के माध्यम से जो मर्मस्पर्शी संवाद प्रस्तुत किए हैं तथा सैन्य संगठन, शैन्य संचालन तथा उनके पारस्परिक युद्धों के समय जिन कल्पनाओं एवं मनोभावों के चित्रण किए गए हैं वे उनके बाहुबली चरित को निश्चय ही एक विशिष्ट काव्य-कोटि में प्रतिष्ठित कर देते हैं।[2]

महाकवि पुष्पदन्त कहां के निवासी थे, इस विषय में विद्वान अभी खोज कर रहे हैं। बहुत सम्भव है कि वे विदर्भ अथवा कुन्तलदेश के निवासी रहे हों। उनके पिता का नाम केशवभट्ट एवं माता का नाम मुग्धादेवी था। उनका गोत्र कश्यप था। वे ब्राह्मण थे किन्तु जैन सिद्धान्तों से प्रभावित होकर बाद में जैन धर्मानुयायी हो गए। वे जन्मजात प्रखर प्रतिभा के धनी थे। वे स्वभाव से अत्यन्त स्वाभिमानी थे और काव्य के क्षेत्र में तो उन्होंने अपने को काव्यपिशाच, अभिमानमेरु, कविकुलतिलक जैसे विशेषणों से अभिहित किया है। उनके स्वाभिमान का एक ही उदाहरण पर्याप्त है कि वीर-शैव राजा के दरबार में जब उनका कुछ अपमान हो गया तो वे अपनी गृहस्थी को थैले में डालकर चुपचाप चले आए थे और जंगल में विश्राम करते समय जब-जब किसी ने उनसे नगर में चलने का आग्रह किया तब उन्होंने उत्तर दिया था कि—"पर्वत की कन्दरा में घास-फूस खा लेना अच्छा, किन्तु दुर्जनों के बीच में रहना अच्छा नहीं। माँ की कोख से जन्म लेते ही मर जाना अच्छा किन्तु सबेरे-सबेरे दुष्ट राजा का मुख देखना अच्छा नहीं।[3]

कवि की कुल मिलाकर तीन रचनाएं उपलब्ध हैं—णायकुमारचरिउ,[4] जसहरचरिउ,[5] एवं महापुराण अथवा तिसट्ठिमहापुरिस गुणालंकारु। ये तीनों ही अपभ्रंश भाषा की अमूल्य कृतियाँ मानी जाती हैं। कवि पुष्पदन्त का समय सन् ९६५ ई० के लगभग माना गया है।[6]

जिनेश्वर सूरि ने अपने **कथाकोषप्रकरण**[7] की ७वीं गाथा की व्याख्या के रूप में "भरतकथानकम्" प्रसंग में बाहुबली के चरित का अंकन किया है। उसमें ऋषभदेव की दूसरी पत्नी सुनन्दा से बाहुबली एवं सुन्दरी को युगल रूप में बताया गया है।[8] शेष कथानक पूर्व ग्रन्थों के अनुसार ही लिखा गया है। किन्तु शैली कवि की अपनी है। उसमें सरसता एवं जीवन्तता विद्यमान है।

आचार्य जिनेश्वरसूरि वर्धमानसूरि के शिष्य थे।[9] उन्होंने वि० सं० ११०८ में उक्त ग्रन्थ की रचना की थी। लेखक अपने समय का एक अत्यन्त क्रान्तिकारी कवि के रूप में प्रसिद्ध था। जिनेश्वरसूरि की अन्य प्रधान कृतियाँ हैं—प्रमालक्ष्म, लीलावतीकथा षट्स्थानक प्रकरण एवं पंचलिंगीप्रकरण।[10] उक्त कथाकोशप्रकरण, भारतीय कथा साहित्य के विकास की दृष्टि से अत्यन्त महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ हैं।

आचार्य **सोमप्रभ** कृत **कुमारपालप्रतिबोध**[11] के "राजपिण्डे भरतचक्रिकथा" नामक प्रकरण की लगभग २० गाथाओं में बाहुबली का प्रसंग आया है।[12] इसका कथानक उस घटना से प्रारम्भ होता है जब भरतचक्रि दिग्विजय के बाद अयोध्या लौटते हैं तथा चक्ररत्न के नगर में प्रवेश करने पर वे इसका कारण अमात्य से पूछते हैं तब अमात्य उन्हें कहता है—

'किंतु कणिट्ठो भाया तुज्झ सुणंदाइ नंदणो अत्थि।
बाहुबलित्ति पसिद्धो विवक्ख-बल-दलण बाहुबलो॥'

बाहुबली-कथानक उक्त गाथा से ही प्रारम्भ होता है और भरत उनसे दृष्टि, गिरा, बाहु, मुट्ठी एवं लट्ठी से युद्ध में पराजित होकर बाहुबली के वध हेतु अपना चक्र छोड़ देते हैं। किन्तु सगोत्री होने से चक्र उन्हें क्षतिग्रस्त किए बिना ही वापिस लौट आता है। बाहुबली भरत की अपेक्षा अधिक समर्थ होने पर भी चक्र का प्रत्युत्तर न देकर संसार की विचित्र गति से निराश होकर दीक्षित हो जाते हैं और यहीं पर बाहुबली-कथा समाप्त हो जाती है।[13]

---

१. भारतीय ज्ञानपीठ (दिल्ली १९७९ ई०) से प्रकाशित.
२. दे० महापुराण १६-१८ सन्धियां
३. दे० जैन साहित्य और इतिहास—नाथूरामप्रेमी (बम्बई, १९५६) पृ० २२५-२३५.
४. भारतीय ज्ञानपीठ (दिल्ली १९७२) से प्रकाशित
५. भारतीय ज्ञानपीठ (दिल्ली, १९७२) से प्रकाशित.
६. दे० णायकुमार चरिउ की प्रस्तावना—पृ० १८.
७-८. सिंघी जैन सीरीज (ग्रन्थांक ११) (बम्बई १९४९) से प्रकाशित—दे० भरत कथानकम् पृ० ५०-५५.
९-१०. दे० वही प्रस्तावना पृ० 2.
११. दे० कथाकोषप्रकरण—प्रस्तावना पृ० ४३.
१२. Govt Central Library, Baroda (1920 A.D.) से प्रकाशित.
१३-१४. दे० कुमारपाल प्रतिबोध—तृतीय प्रस्ताव पृ० २१६-१७.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आचार्य सोमप्रभ का रचनाकाल ई० सन् ११६५ माना गया है।[1] ये गुजरात के चालुक्य सम्राट कुमारपाल एवं आचाय हेमचन्द्र के समकालीन थे।[2] सोमप्रभ ने प्रस्तुत रचना का प्रणयन उस समय किया था जब वह प्राग्वाटवंशी कविराजा श्रीपाल के पुत्र कवि सिद्धपाल के यहां निवास कर रहा था।[3] कवि ने इस ग्रन्थ की रचना नेमिनाग के पुत्र शेठ अभयकुमार के हरिश्चन्द्र एवं श्रीदेवी नामक पुत्र एवं पुत्री के धर्मलाभार्थ की थी।[4] इस ग्रन्थ के निर्माण के समय आचार्य हेमचन्द्र ने भी अपने तीन शिष्यों द्वारा इसे सुना था।[5] कवि सोमप्रभ की अन्य रचनाओं में सुमतिनाथचरित, सूक्तिमुक्तावलि (अपरनाम सिन्दुरप्रकर) एवं शतार्थकाव्य उपलब्ध एवं प्रकाशित हैं। इनमें से कुमारपाल प्रतिबोध प्रस्ताव शैली में लिखा गया है। इसमें कुल ५ प्रस्ताव (अध्याय) हैं तथा कुल लगभग ६७ कथानक लिखे गए हैं जो विविध नैतिक आदर्शों से सम्बन्धित हैं।

रस परम्परा के साहित्य में जितनी रचनाएं उपलब्ध हैं उनमें **भरतेश्वर बाहुबली रास**[6] सर्वप्रथम एवं अति विस्तृत रचना मानी गई है। इसकी सबसे बड़ी विशेषता यह है कि यह सन्धिकालीन हिन्दी जैन साहित्य की कृति है तथा लगभग १३वीं सदी से १५ वीं सदी के मध्य लिखे गए रास-साहित्य की एक प्रतिनिधि रचना है।

प्रस्तुत रास-काव्य की बाहुबली कथा का प्रारम्भ अयोध्यानगरी के सम्राट ऋषभ के गुण वर्णनों से होता है। उनकी सुमंगला एवं सुनन्दा नामक रानियों से क्रमशः भरत एवं बाहुबली का जन्म होता है। योग्य होने पर भरत को अयोध्या तथा बाहुबली को तक्षशिला का राज्य मिलता है। ऋषभ को जिस दिन कैवल्य की प्राप्ति होती है उसी दिन भरत को उनकी आयुधशाला में दिव्य चक्ररत्न की उपलब्धि होती है। उसके बल से वे दिग्विजय करते हैं। वापिस लौटते समय जब वह अयोध्या के बाहर रुक जाता है तभी उन्हें विदित होता है कि बाहुबली को जीते बिना उनकी सफलता अपूर्ण है। यह देखकर वे अपने दूत को भेजकर बाहुबली को अपनी अधीनता स्वीकार करने का सन्देश भेजते हैं। बाहुबली के द्वारा अस्वीकार किए जाने पर दोनों भाइयों में युद्ध हो जाता है और वह लगातार १३ दिनों तक चलता है। दोनों पक्षों की अपार सेना की क्षति देखकर तथा अवशिष्ट सैन्य क्षति-ग्रस्त न हो इस उद्देश्य से वे नेत्रयुद्ध, जलयुद्ध और मल्लयुद्ध करते हैं। भरत इन युद्धों में बाहुबली से पराजित होकर उनपर चक्र चला देते हैं। इस मर्यादा विहीन कार्य से भी यद्यपि बाहुबली का कुछ बिगड़ता नहीं फिर भी उन्हें भरत के इस अनैतिक कार्य पर बड़ा दुख हुआ और वे वैराग्य से भरकर दीक्षित हो गए। भरत ने शासन सम्हाला और यशार्जन किया। यहीं पर कथा का अन्त हो जाता है।

यह रचना वीर रस प्रधान है किन्तु उसका अवसान शान्त रस में हुआ है भयानक नरसंहार के बाद जब दोनों भाइयों में नेत्रयुद्ध, जलयुद्ध एवं मल्लयुद्ध होता है तब उसमें भरत की पराजय होती है और वह आगबबूला होकर बाहुबली पर चक्ररत्न से आक्रमण कर देते हैं। भौतिक सम्पदा प्राप्ति के लिए भरत के इस अनैतिक और अमर्यादित कार्य को देखकर बाहुबली को वैराग्य हो जाता है और वे कहते हैं—

"धिक् धिक् ए एय संसार धिक् धि राणिम राज रिद्धि।
एवडु ए जीव संहार की धड़ कुण विरोध वसि॥"

वीर रस प्रधान उक्त काव्य के उक्त प्रसंग में समस्त आलम्बन शान्ति में परिवर्तित हो जाते हैं। इस सहसा परिवर्तन की निर्दोष अभिव्यक्ति कवि की अपनी विशेषता है। स्वपराजय जन्य तिरस्कार के कारण भरत का अपने सहोदर पर धर्मयुद्ध के स्थान पर चक्र का प्रहार घोर अनैतिक कार्य था। इसी अनैतिक कार्य ने बाहुबली के हृदय में शम की सृष्टि की और फलस्वरूप वे दीक्षित हो जाते हैं। यह देख भरत के नेत्र डबडबा उठते हैं और वे उनके चरणों में गिर जाते हैं। यथा—

"सिरिवरि ए लोंच करेउ कासगि रहीउ बाहुबले।
अंसूइ आँखि भरेउ तस पणमए भरह भडो॥"[7]

प्रस्तुत काव्य में प्रयुक्त विविध अलंकारों की छटा प्रसंगानुकूल विविध छन्द योजना, कथनोपकथन एवं मार्मिक उक्तियों ने इसे एक आदर्श काव्य की कोटि में ला खड़ा किया है। तत्कालीन प्रचलित भाषाओं का तो इसे संग्रहालय माना जा सकता है। इस

१-२. दे० वही अंग्रेजी—प्रस्तावना पृ० ३.
३-४. दे० कुमारपाल प्रतिबोध—अंग्रेजी प्रस्तावना पृ० ३.
५. दे० आदिकाल के अज्ञात हिन्दी रास-काव्य—पृ० ३७-५४.
६-७. दे० भरतेश्वर बाहुबलीरास—पद्य सं १६१, १६३,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उत्तर अपभ्रंश (यथा-रिसय, भरह, चक्क आदि) राजस्थानी, जूनी, गुजराती (यथा-काल, परवेश, कुमर, आणंद, डामी, जिणभई आदि) के साथ-साथ अनेक प्राचीन (यथा नमिवि, नरिंदह आदि), नवीन (यथा—वार, वरिस, फागुण) आदि एवं तत्सम (यथा—चरित्र, मुनि, गुणगणभंडार आदि) शब्दों के भी प्रयोग हुए हैं ।

प्रस्तुत रचना के लेखक **शालिभद्र सूरि** हैं । रचना में कवि ने उसके रचना स्थल की सूचना नहीं दी किन्तु भाषा एवं वर्णन प्रसंगों से यह स्पष्ट विदित होता है कि वे गुजरात अथवा राजस्थान के निवासी थे तथा वहीं कहीं पर उन्होंने इसकी रचना की होगी । कवि ने इसका रचना काल स्वयं ही वि० सं० १२४१ कहा है । यथा—

"जो पढइ ए वसह वदीत सो नरो नितु नव निहि लहइ ए ।
संवत् ए बार एकतालि फागुण पंचमिइं एउ कोउ ए ।।[१]

महाकवि **अमरचन्द्र** कृत **पद्मानन्द महाकाव्य**[२] में बाहुबली के चरित्र का चित्रण काव्यात्मक शैली में हुआ है । उसके नौवें सर्ग में भरत—बाहुबली जन्म एवं १७वें सर्ग में वर्णित कथा के आरम्भ के अनुसार दिग्विजय से लौटने पर भरत का चक्ररत्न जब अयोध्या नगरी में प्रविष्ट नहीं होता तब उसका कारण जानकर भरत अपनी पूरी शक्ति के साथ बाहुबली पर आक्रमण करते हैं और सैन्य युद्ध के पश्चात् दृष्टि, जल एवं मुष्टियुद्ध में पराजित होकर भरत अपना चक्ररत्न छोड़ता है किन्तु उसमें भी वह विफल सिद्ध होता है। बाहुबली भरत के इस अनैतिक कृत्य पर दुखी होकर संसार के प्रति उदासीन होकर दीक्षा ग्रहण कर तपस्या हेतु वन में चले जाते हैं ।

पद्मानन्द महाकाव्य में नवीन कल्पनाओं का समावेश नहीं मिलता । बाहुबली की विरक्ति आदि सम्बन्धी अनेक घटनाएं चित्रित की गई हैं । उनका आधार पूर्वोक्त पउमचरियं एवं पद्मपुराण ही हैं । कवि की अन्य उपलब्ध रचनाओं में बालभारत, काव्य-कल्पलता, स्यादिशब्द समुच्चय एवं छन्दरत्नावली प्रमुख हैं ।[३]

कवि अमरचन्द्र का काल वि० सं० की १४ वीं सदी निश्चित है ।[४] वे गुर्जरेश्वर वीसलदेव की राजसभा में वि० सं० १३०० से १३२० के मध्य एक सम्मानित राजकवि के रूप में प्रतिष्ठित थे ।[५] बालभारत के मंगलाचरण में कवि ने व्यास की स्तुति की है । इससे प्रतीत होता है कि कवि पूर्व में ब्राह्मण था किन्तु बाद में जैन धर्मानुयायी हो गया ।[६] जिस प्रकार कालिदास को 'दीपशीखा' एवं माघ को 'घण्टामाघ' की उपाधियां मिली थीं उसी प्रकार अमरचन्द्र को भी 'वेणीकृपाण[७]' की उपाधि से अलंकृत किया गया था । कवि का उक्त पद्मानन्द महाकाव्य १७ सर्गों में विभक्त है ।

शत्रुञ्जय माहात्म्य[८] में **धनेश्वरसूरि** ने भरत बाहुबली की चर्चा की है । उसके चतुर्थ-सर्ग में बाहुबली एवं भरत के युद्ध संघर्ष तथा उसमें पराजित होकर भरत द्वारा बाहुबली पर चक्ररत्न छोड़े जाने तथा चक्ररत्न के विफल होकर वापिस लौट आने की चर्चा की गई है । बाहुबली भरत के इस अनैतिक कृत्य पर संसार के प्रति उदासीन होकर दीक्षा ले लेते हैं । प्रस्तुत काव्य में कुल १५ सर्ग हैं तथा शत्रुञ्जय तीर्थ से सम्बन्ध रखने वाले प्रायः सभी महापुरुषों की उसमें चर्चा की गई है ।

एक प्रशस्ति से ज्ञात होता है कि धनेश्वरसूरि ने वि० सं० ४७७ में प्रस्तुत काव्य को वलभी नरेश शिलादित्य को सुनाया था ।[९] किन्तु अधिकांश विद्वानों ने उसे इतिहास सम्मत न मानकर उनका समय ई० सन् की १३ वीं शती माना है ।[१०] वे चन्द्रगच्छ के चन्द्रप्रभसूरि के शिष्य थे ।[११]

---

१. दे० भरतेश्वर बाहुबलीरास—पद्य सं० २०३.
२. सयाजीराव गायकवाड ओरियण्टल इंस्टीट्यूट (बड़ौदा १६३२ ई०) से प्रकाशित.
३. विशेष के लिए दे० संस्कृत-काव्य के विकास में जैन कवियों का योगदान (दिल्ली १६७१) पृ० ३५३.
४. वही पृ० ३५२.
५. वही पृ० ३५१.
६. वही पृ० ३५२.
७. बालभारत—आदिपर्व ११।६.
८. श्री पोपटलाल प्रभुदास (अहमदाबाद वि० सं० १६६५) द्वारा प्रकाशित.
९. शत्रुञ्जय माहात्म्य—१५/१८७.
१०-११. दे० संस्कृत काव्य के विकास में जैन कवियों का योगदान पृ० ४५१.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

धणवाल कृत **बाहुबलिदेवचरिउ**[1] का अपरनाम कामचरित भी है। इसकी १८ सन्धियों में महाकाव्यात्मक शैली में बाहुबली के चरित का सुन्दर अंकन किया गया है। कवि ने सज्जन-दुर्जन का स्मरण करते हुए कहा है कि "यदि नीम को दूध से सींचा जाय, ईख को यदि शस्त्र से काटा जाय, तो भी जिस प्रकार वे अपनी मधुरता नहीं छोड़ते, उसी प्रकार सज्जन-दुर्जन भी अपने स्वभाव को नहीं बदल सकते ! तत्पश्चात् कवि ने इन्द्रियजयी ऋषभ का वर्णन कर बाहुबली के जीवन का सुन्दर चित्रांकन किया है। इसका कथानक वही है, जो आदिपुराण का, किन्तु तुलना की दृष्टि से उक्त बाहुबली चरित अपूर्व है।

इस ग्रन्थ की प्रमुख विशेषता यह है कि इसकी आद्य-प्रशस्ति में ऐसे अनेक पूर्ववर्ती साहित्यकारों एवं उनकी रचनाओं के उल्लेख मिलते हैं, जो साहित्य जगत के लिए सर्वथा अज्ञात एवं अपरचित थे। उनमें से कुछ के नाम इस प्रकार हैं :—कवि चक्रवर्ती धीरसेन, वज्रसूरि एवं उनका षट्दर्शनप्रमाण ग्रन्थ, महासेन एवं उनका सुलोचना चरित ; दिनकरसेन एवं उनका कन्दर्पचरित (अर्थात् बाहुबली चरित) ; पद्मसेन और उनका पार्श्वनाथचरित, अमृताराधना (कर्त्ता के नाम का उल्लेख नहीं), गणि अम्बसेन और उनका चन्द्रप्रभचरित तथा धनदत्तचरित ; कवि विष्णुसेन (इनकी रचनाओं का उल्लेख नहीं) ; मुनि सिंहनन्दि और उनका अनुप्रेक्षाशास्त्र एवं णवकारमन्त्र ; कवि नरदेव (रचना का उल्लेख नहीं) ; कवि गोविन्द और उनका जयधवल आर शालिभद्र चतुर्मुख, द्रोण, एवं सेढु[2] (इनकी रचनाओं के उल्लेख नहीं)। जैन-साहित्य के इतिहासकारों के लिए ये सूचनाएं अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं।

इस रचना के रचियता महाकवि धनपाल हैं, जो गुजरात के पल्हणपुर या पालनपुर के निवासी थे। उस समय वहां बीसलदेव राजा का राज्य था। उन्होंने चन्द्रवाड नगर के राज्य-श्रेष्ठी और राज्यमन्त्री, जैसवाल कुलोत्पन्न साहू वासाधर की प्रेरणा से उक्त बाहुबलीदेवचरिउ की रचना की थी। वासाधर के पिता—सोमदेव सम्भरी (शाकम्भरी ?) के राजा कर्णदेव के मन्त्री थे।

अपने व्यक्तिगत परिचय में कवि ने बताया है कि पालनपुर के पुरवाड़वंशीय भोंवइ नामके नगर सेठ ही उसके (कवि के) पितामह थे। उनके पुत्र सुहडप्रभ तथा उसकी पत्नी सुहडादेवी से कवि धनपाल का जन्म हुआ था। कवि के अन्य दो भाई संतोष एवं हरिराज थे।

कवि धनपाल के गुरु का नाम प्रभाचन्द्र था। उनके आशीर्वाद से कवि को कवित्वशक्ति प्राप्त हुई थी। ये प्रभाचन्द्र गणि ही आगे चलकर योगिनीपुर (दिल्ली) के एक महोत्सव में भट्टारक रत्नकीर्ति के पट्ट पर प्रतिष्ठित किए गए थे। इन्होंने अनेक वादियों को शास्त्रार्थ में पराजित किया था। दिल्ली के तत्कालीन सम्राट मुहम्मदशाह तुगलक इनकी प्रतिभा से अत्यन्त प्रसन्न रहते थे। बाहुबलिदेव-चरिउ की अन्त्य-प्रशस्ति के अनुसार कवि का समय वि० सं० १४५४ की बैशाख शुक्ल त्रयोदशी सोमवार है।

रत्नाकरवर्णी कृत **भरतेशवैभव**[3] भारतीय वाङ्मय की अपूर्व रचना है। इसकी २७ वीं सन्धि में प्रसंग प्राप्त कामदेव आस्थान सन्धि में बाहुबली के बल वीर्य पुरुषार्थ एवं पराक्रम के साथ-साथ उनकी स्वाभिमानी एवं दर्पीली वृत्ति एवं विचार दृढ़ता का हृदयग्राह्य चित्रण किया गया है। वैसे तो यह समस्त ग्रन्थ गन्ने की पोरों के समान सर्व प्रसंगों में मधुर है किन्तु भरत एवं बाहुबली का संघर्ष इस ग्रन्थ की अन्तरात्मा है। भाई-भाई में अहंकारवश भावों में विषमता आ सकती है। किन्तु तद्भव मोक्षगामी चरमशरीरी तीर्थंकर पुत्रों में प्राणान्तक वैषम्य हो, यह कवि की दृष्टि से युक्तियुक्त प्रतीत नहीं होता। अतः कवि ने दृष्टियुद्ध, जलयुद्ध, मल्लयुद्ध के माध्यम से भरतेश्वर को पराजित कराकर भी भरतेश्वर के गौरव की सुरक्षा की है। भरतेश-वैभव के अनुसार भुजबली (बाहुबली) पर चक्ररत्न का प्रयोग उसके वध के लिए नहीं अपितु उनकी सेवा के लिए प्रेषित किया गया है। इस रूप में कवि ने कथानक के हार्द को निश्चय ही एक नया मोड प्रदान किया है। इस प्रसंग में कवि की सूझ-बूझ अत्यन्त सराहनीय एवं तर्कसंगत है। अन्य कवियों के कथन की प्रामाणिकता की रक्षा करते हुए भी कवि ने निजी भावना को अभिव्यक्त कर अपने कवि चातुर्य का सुन्दर परिचय दिया है।

भरतेश-वैभव ग्रन्थ पाँच कल्याणों में (सर्गों में) विभक्त है—भोगविजय कल्याण, दिग्विजय कल्याण, योगविजय कल्याण, मोक्षविजय कल्याण एवं अर्ककीर्त्ति विजय कल्याण। इनमें ८० सन्धियाँ एवं ९९६० श्लोक संख्या है। देवचन्द्रकृत राजवलिकथा के अनुसार इस ग्रन्थ में ८४ सन्धियाँ होनी चाहिए। इससे प्रतीत होता है कि प्रस्तुत उपलब्ध कृति में ४ सन्धियाँ अनुपलब्ध हैं।[4]

---

१. आमेर शास्त्र भण्डार जयपुर में सुरक्षित एवं अद्यावधि अप्रकाशित प्रति के आधार पर प्रस्तुत विवरण.

२. दे० वही आद्य प्रशस्ति.

३. धर्मवीर जैनग्रन्थमाला कल्याण-भवन (शोलापुर १९७२ ई०) से दो जिल्दों में प्रकाशित.

४. दे० भरतेश-वैभव-प्रस्तावना पृ० १

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इसके रचियता रत्नाकरवर्णी क्षत्रियवंश के थे। उनके पिता का नाम श्रीमन्दरस्वामी, दीक्षागुरु का नाम चारुकीर्त्ति तथा माक्षाग्रगुरु का नाम हंसनाथ (परमात्मा) था। कवि देवचन्द्र के अनुसार भरतेश-वैभव का रचियता कर्णाटक के सुप्रसिद्ध जैन तीर्थ— मूडविद्री के सूर्यवंशी राजा देवराज का पुत्र था, जिसका नाम 'रत्ना' रखा गया। रत्नाकर के विषय में कहा जाता है कि वह अत्यन्त स्वाभिमानी किन्तु अहंकारी कवि था। अपने गुरु से अनबन हो जाने के कारण उसने जैन धर्म का त्याग कर लिंगायत धर्म स्वीकार कर लिया था और उसी स्थिति में उसने वीरशैवपुराण, वासवपुराण, सोमेश्वर शतक आदि रचनाएं की थीं। कवि की भरतेश-वैभव के अतिरिक्त अन्य जैन रचनाओं में रत्नाकरशतक, अपराजितशतक, त्रिलोकशतक प्रमुख हैं। इसके अतिरिक्त लगभग २००० श्लोक प्रमाण अध्यात्म गीतों की रचना की थी।[1]

कवि ने अपनी त्रिलोकशतक की प्रशस्ति में उसका रचनाकाल शालिवाहन शक वर्ष १४७९ (मणिशैल गति इंदुशालिशक) अर्थात् सन् १५५७ कहा है। इससे यह स्पष्ट है कि रत्नाकर का रचनाकाल ई० की १५ वीं सदी का मध्यकाल रहा है।[2]

ग्रन्थ की मूल-भाषा कन्नड़ है। अपनी विशिष्ट गुणवत्ता के कारण यह ग्रन्थ भारतीय वाङ्मय का गौरव ग्रन्थ कहा जाय तो कोई अत्युक्ति नहीं होगी।

१५ वीं सदी हिन्दी के विकास एवं प्रचार का युग था। रास साहित्य के साथ-साथ सन्त कवि कबीर, सूर एवं जायसी, हिन्दी के क्षेत्र में धार्मिक साहित्य का प्रणयन कर चुके थे। उसने जन-मानस पर अमिट प्रभाव छोड़ा था। जैन कवियों का भी ध्यान इस ओर गया और उन्होंने भी युग की मांग को ध्यान में रखकर बाहुबली चरित का लोक प्रचलित हिन्दी में अंकन किया।

इस दिशा में कवि **कुमुदचन्द्र कृत बाहुबली छन्द**[3] नामकी आदिकालीन हिन्दी रचना महत्वपूर्ण है। उसमें परम्परागत कथानक को छन्द-शैली में निबद्ध किया गया है। इसकी कुल पद्य संख्या २११ है। इसके आदि एवं अन्त के पद्य निम्न प्रकार हैं—

भरत महीपति कृत मही रक्षण बाहुबलि बलवंत विचक्षण।
तेह भनो करसुं नवछंद सांभलता भणतां आनंद॥
करणा केतकी कमरख केली नव-नारंगी नागर बेली।
अगर नगर तरु तुंदुक ताला सरल सुपारी तरल तमाला॥

संसार सारित्यागं गतं विबुद्ध वृंद वंदित चरणं।
कहे कुमुदचंद्र भुजबल जयो सकल संघ मंगल करण॥

इस ग्रन्थ का रचनाकाल वि० सं० १४६७ है। यह ग्रन्थ अद्यावधि अप्रकाशित है।

भट्टारक **सकलकीर्ति** कृत **वृषभदेवचरित** (आदिपुराण) संस्कृत का पौराणिक काव्य है, जिसमें जिनसेन की परम्परा के बाहुबली कथानक का चित्रण किया गया है। सकलकीर्ति का समय विक्रम की १६ वीं सदी का प्रारम्भ माना गया है।

"**कार्कलद गोम्मटेश्वर चरिते**" सांगत्य छन्द में लिखित कन्नड़ भाषा का महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ हैं। इसमें १७ सन्धियां (प्रकरण) एवं २२२५ पद्य हैं। इस ग्रन्थ में गोम्मटेश्वर अथवा बाहुबली का जीवन चरित तथा सन् १४३२ ई० में कारकल में राजावीरपाण्ड्य द्वारा प्रतिष्ठापित बाहुबली-प्रतिमा का इतिवृत अंकित है। ऐतिहासिक दृष्टि से यह ग्रन्थ बड़ा महत्त्वपूर्ण है।

प्रस्तुत रचना के लेखक कवि **चन्द्रम** हैं। इनका समय १६ वीं सदी के लगभग माना गया है।[4]

पुण्यकुशलगणि (रचनाकाल वि० सं० १६४१—१६६९) विरचित **भरतबाहुबली महाकाव्यम्** संस्कृत भाषा में लिखित बाहुबली सम्बन्धी एक अलंकृत रचना है जिसके १८ सर्गों के ५३५ विविध शैली के श्लोकों में बाहुबली के जीवन का मार्मिक चित्रण किया गया है।

इसके सम्पादक मुनि नथमल जी हैं, जिन्होंने तेरापन्थी शासन संग्रहालय में सुरक्षित हस्तप्रति एवं आगरा के विजयधर्मसूरि ज्ञानमन्दिर में सुरक्षित हस्तप्रति उपलब्ध करके उन दोनों के आधार पर इसका सम्पादन किया है। अनेक त्रुटित श्लोकों की पूर्ति

---

१. दे० वही—पृ० १-०.
२. दे० वही पृ० २-५.
३. दे० राजस्थान के जैन शास्त्र भण्डारों की सूची—भाग ५ पृ० १०६६.
४. जै० सि० मा० ५।२।९२-१००.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मुनिराज नथमल जी ने की है तथा समग्र ग्रन्थ का हिन्दी अनुवाद मुनिश्री दुलहराज जी ने किया है। इसका सर्वप्रथम प्रकाशन सन् १९७४ में जैन विश्वभारती लाडनूं से हुआ।

इसका कथानक भरत चक्रवर्ती के छह खण्डों पर विजय प्राप्त करने के बाद उनके अयोध्यानगरी में प्रवेश के साथ होता है। उस समय बाहुबली बहली प्रदेश के शासक थे। बाहुबली के अपने अनुशासन में न आने से भरत चक्रवर्ती अपनी विजय को अपूर्ण मान रहे थे, अतः वे बाहुबली के पास सुवेग नामक दूत को भेजकर बाहुबली को संकेत करते हैं कि वे भरत का अनुशासन स्वीकार कर लें। बाहुबली इसे अस्वीकार कर देते हैं और अन्त में दोनों में १२ वर्षों तक भयानक युद्ध होता है। युद्ध की समाप्ति पर बाहुबली भगवान ऋषभदेव के पास दीक्षा ले लेते हैं और भरत चक्रवर्ती शासन का काम करते हैं। अन्त में दीक्षा ग्रहण कर लेते हैं।[१]

काण्ठासंघ नन्दी तट गच्छ के भट्टारक सुरेन्द्रकीर्ति के शिष्य पामों ने संवत् १७४९ में भरतभुजबलीचरित्र की रचना की। इस रचना की पद्य संख्या २१९ है।

अन्तिम पद्य का एक अंश निम्न प्रकार है—

कारंजो जिनचन्द्र इंद्रवंदित नमि स्वार्थे।
संघवी भोजनी प्रीत तेहना पठनार्थे ।।
वलि सकल श्रीसंघ ने येथि सइ वांछित फले।
चक्रिकाम नामे करी पामो कह सुरतरु फले ।।

कन्नड़ भाषा में बाहुबली सम्बन्धी अनेक रचनाएं लिखी गईं। इनमें से देवचन्द्रकृत "राजाबलिकथे" अत्यन्त प्रसिद्ध ग्रन्थ है। इसे जैन इतिहास का प्रामाणिक ग्रन्थ माना गया है। इस ग्रन्थ की प्राचीन ताड़पत्रीय प्रति मैसूर के राजकीय प्राच्य ग्रन्थागार में सुरक्षित है जिसमें कुल २९८ पृष्ठ हैं। इसका वर्ण्य-विषय १३ प्रकरणों में विभक्त है। उसके प्रथम प्रकरण में (पृष्ठ ४-५) भरत चक्रवर्ती की दिग्विजय, बाहुबलि युद्ध एवं उनके द्वारा दीक्षा ग्रहण सम्बन्धी प्रसंग संक्षिप्त रूप में वर्णित हैं।[२]

बाहुबलिशतक[३]—बाहुबली सम्बन्धी एक स्तुति परक हिन्दी रचना है जिसके लेखक श्री महेशचन्द्र प्रसाद हैं। इन्होंने सन् १९३५ में श्रवण बेलगोला की यात्रा की थी तथा गोम्मटेश की मूर्ति से प्रभावित होकर उक्त रचना लिखी थी। इसमें कुल १०५ पद्य हैं। नमूने के कुछ पद्य इस प्रकार हैं—

जग तें पाहुत होत जब, जग में पाहुन होत।
जगतें पाहन होत जब, जग में पाहन होत ।।

हास नहीं उपहास यह, कली बली का मानु।
कली कलेजे की कली, तोड़ी कली समानु ।।

नहीं धरा पर किछु धरा, भरा कलेश निहसेस।
धीर धराधर पै खड़े, यहै देन उपदेश ।।

नासहु तम अग्यान तुम, प्रग्या प्रभा प्रकासि।
जनहित जनु कोउ दिव्य रुचि रुचिर रेडियम-रास ।।

बना सर्वदा ही रहे तब स्नेह पेट्रोल।
जाते पहुँचे मोक्ष को आतम-मोटर पोल ।।

वर्तमान में भी बाहुबली चरित सम्बन्धी साहित्य का प्रणयन हो रहा है। इस रचनाओं में मूल विषय के साथ-साथ आधुनिक शैलियों एवं नवीन वादों के प्रयोग भी दृष्टगोचर होते हैं। रचनाएँ गद्य एवं पद्य दोनों में हैं। ऐसी रचनाओं में 'अन्तर्द्वन्द्वों के पार'[४] (श्री लक्ष्मीचन्द्र जैन) गोम्मटेश गाथा[५] (नीरज), जय गोम्मटेश्वर[६] (श्री अक्षय कुमार जैन), भगवान आदिनाथ[७] (श्री वसन्त कुमार शास्त्री), बाहुबली वैभव[८] (श्री द्रोणाचार्य) प्रमुख हैं।

उक्त ग्रन्थ तो प्रकाशित अथवा अप्रकाशित होने पर भी अध्ययनार्थ उपलब्ध हैं, अतः उनकी विशेषताएं इस निबन्ध में प्रस्तुत की गई हैं। किन्तु अभी अनेक ग्रन्थरत्न ऐसे भी हैं, जिनकी केवल संक्षिप्त सूचनाएं तो उपलब्ध हैं किन्तु अध्ययनार्थ उन्हें उपलब्ध नहीं किया जा सकता क्योंकि वे दूरंदेशी विभिन्न शास्त्र भण्डारों में बन्द हैं। इनके प्रकाश में आने से बाहुबली कथानक पर नया प्रकाश पड़ेगा, इसमें सन्देह नहीं। ऐसे ग्रन्थों का विवरण इस प्रकार है—

---

१. जैन विश्वभारती, लाडनूं से प्रकाशित.
२. जैन सिद्धान्त भास्कर २।४।१५४.
३. जैन सिद्धान्त भास्कर २।४।१५९-६०.
४-५. भारतीय ज्ञानपीठ (दिल्ली, १९७९) से प्रकाशित.
६. स्टार पब्लिकेशंज (दिल्ली, १९७९) से प्रकाशित.
७. अनिल पाकेट बुक्स मेरठ से प्रकाशित.
८. अनेकान्त प्रकाशन, फीरोजाबाद (आगरा) से प्रकाशित.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

क्रम संख्या	ग्रन्थ नाम एवं उनका प्रमाण	प्रणेता	भाषा	रचनाकाल	प्रतिलिपिकाल	पत्र संख्या	उपलब्ध करने अथवा जानकारी प्राप्त करने के स्रोत	विशेष
१	२	३	४	५	६	७	८	९
१.	आदिपुराण	आदिपम्प	कन्नड़	९४१ ईस्वी	—	अज्ञात	Jaina Antiquary Vol V No. IV pp. 144-146	ऋषभदेव चरित वर्णन प्रसंग में बाहुबलि चरित वर्णित है।
२.	नाभेयनेमि द्विसन्धान काव्य	हेमचन्द्र	संस्कृत	विक्रम की १३ वीं सदी	—	अज्ञात	पाटण प्राचीन भण्डार नं० १ झवरीवाडा, पाटन	श्लेष-शैली में बाहुबलि चरित वर्णित है।
३.	बाहुबलीदेवचरिउ	धनपाल	अपभ्रंश	वि० सं० १४५४	—	२७०	आमेर शा० भं०, जयपुर में सुरक्षित	—
४.	बाहुबलि छन्द पद्य सं० २११	कुमुदचन्द्र	हिन्दी	वि० सं० १४६७	—	अज्ञात	आमेर शास्त्र भण्डार जयपुर	हिन्दी भाषा-विकास की दृष्टि से यह ग्रन्थ अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है।
५.	तिसट्ठि महापुरिक्ष गुणालंकारु	रइधू०	अपभ्रंश	—	वि० सं० १४९६	९०२	ग्रन्थ सूची भा० ५/१०६९ दि० जैन मन्दिर बारा बंकी	—
६.	भुजबलि-शतक	दोड्डय	कन्नड़	वि० सं० १५५०	—	अज्ञात	Jain Antiquary Vol V No IV, pp. 144-146.	१०० पद्यों में बाहुबलि चरित वर्णित है
७.	बाहुबलीचरिते	पंचबाण	कन्नड़	१६१४ ई०	—	अज्ञात	,, ,,	—
८.	भरतराज दिग्विजय वर्णन-भाषा	अज्ञात	हिन्दी	—	वि० सं १७३८ असोज सुदी ५	५६	आमेर शा० भं० जयपुर ग्रन्थ सूची भा० ३/६५.	इस रचना को जिनसेन कृत आदिपुराण के २६ वें पर्व का प्राचीन हिन्दी गद्यानुवाद माना जा सकता है। हिन्दी भाषा विकास की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण रचना
९.	बाहुबलिवेलि	वीरचंदसूरि	राजस्थानी हिन्दी	—	वि० सं० १७४४	१०	दि० जैन खण्डेलवाल मन्दिर उदयपुर में सुरक्षित	दे० आमेर शा० भं० जयपुर ग्रन्थसूची भा० ५/ ११६"
१०.	भरतभुजबलिचरित २२० पद्य	पामो	हिन्दी	वि० सं० १७४६	—	अज्ञात	भट्टारक सम्प्रदाय (सोलापुर) पृ० २८६	
११.	शत्रुञ्जयरास	जिनहर्षगणि	गुजराती	वि० सं० १७५५	—	अज्ञात		
१२.	गोम्मटेशचरिते	अनन्तकवि	कन्नड़	१७८० ई०	—	अज्ञात	Jain Antiquary Vol V No IV pp. 144-146	

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१	२	३	४	५	६	७	८	९
१३.	बाहुबलिनी निषद्या	अज्ञात	राजस्थानी हिन्दी	—	वि० सं १७८१	अज्ञात	आमेर शा० भं० जयपुर ग्रन्थसूची सं० ५/११४३.	
१४.	भुजबलि चरिते	चन्द्रम	कन्नड़	१८ वीं सदी ईस्वी	—	अज्ञात	Jaina Antiquary, Arrah, Vol V No. IV pp. 144-146.	
१५.	भुजबलिचरिते, ४ सन्धियां एवं ५५१ पद्य	पद्मनाभ	कन्नड़	१८ वीं सदी ईस्वी	—	अज्ञात	जैन सिद्धान्त भास्कर आरा ८/१/५५-५८	कवि चन्द्रम के गोम्मटेश-चरिते के अनुकरण पर प्रसंग प्राप्त बाहुबलि-चरित वर्णन
१६.	राजावलिकथे	देवचन्द्र	कन्नड़	१८३८ ई०	—	अज्ञात	जै० सि० भा० २/४/१५४.	
१७.	भरतेश्वर वैराग्य पद्य सं० २४१	अज्ञात	अपभ्रंश हिन्दी	—	—	अज्ञात	आमेर शा० भं० जयपुर ग्रन्थ सूची भा० ३/११७.	यह कृति एक गुटके में संग्रहित है।
१८.	बाहुबलिगीत	कल्याणकीर्ति	राजस्थानी हिन्दी	—	—	अज्ञात	आमेर शा० भं० जयपुर ग्रन्थसूची भा० ५/६६२.	
१९.	बाहुबलिवेलि	शान्तिदास	,,	—	—	अज्ञात	आमेर शा० भं० जयपुर ग्रन्थसूची भा० ३/१११०	
२०.	बाहुबलिनोछन्द	वादिचन्द्र	,,	—	—	८४	उपर्युक्त दे० ग्रन्थसूची भा० ५/११६४	
२१.	वृषभदेव पुराण	चन्द्रकीर्ति [श्री भूषण भट्टारक के शिष्य]	संस्कृत	—	—	अज्ञात	श्री बलात्कारगण जैन मन्दिर कारंजा में सुरक्षित दे० Discriptive catalogue of MSS of C P. and Berar.	
२२.	आदिनाथ फागु	ज्ञानभूषण	गुजराती	—	—	अज्ञात	,, ,,	
२३.	बाहुबलि गीत	ठाकुरसी	हिन्दी	—	—	अज्ञात	आमेर शा० भं० जयपुर ग्रन्थसूची भा० ५/६६२	

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१	२	३	४	५	६	७	८	९
२४.	आदिनाथ चरित्र	—	संस्कृत	—	—	३५	भट्टारकीय दि० जैन मन्दिर अजमेर में सुर-क्षित दे० आ० शा० भं० जयपुर ग्रन्थसूची भा० ५/३१५	यह रचना एक गुटके में सुरक्षित है
२५.	नाभिनन्दनोद्धार प्रबन्ध	—	संस्कृत	—	—	अज्ञात	डेलाका भण्डार, अहमदाबाद	
२६.	ऋषभोल्लासकाव्य	—	संस्कृत	—	—	अज्ञात	डेलाका शास्त्र भण्डार, अहमदाबाद	
२७.	भरतबाहुबलि काव्य	—	संस्कृत	—	—	,,	श्री विजय धर्मलक्ष्मी ज्ञान मन्दिर, आगरा	
२८.	बाहुबलि चरित्र	—	संस्कृत	—	—	,,	जैसलमेर शास्त्र भण्डार जैसलमेर (राजस्थान)	
२९	भरतचरित्र	—	प्राकृत	—	—	,,	डेकन कॉलेज ग्रन्थागार पूना	
३०.	आदिनाथ चरित्र	वर्धमान सूरि	प्राकृत	—	—	,,	,, ,, ,,	
३१.	गोम्मटेश चरित	—	कन्नड़	—	—	,,	Jaina Antiquary Vol V No IV pp. 144-146.	
३२.	स्थल पुराण	—	,,	—	—	,,	,, ,, ,,	
३३.	बाहुबलि	—	सं० अप० एवं जूनी गुज०	—	—	,,	भण्डारकर ओरियण्टल रिसर्च इंस्टीट्यूट, पूना में सुरक्षित	
३४.	बाहुबलि शतक १०५ पद्य	महेश चन्द्र प्रसाद (आरा वाले)	हिन्दी	१९३५ ई०	—	,,	जैं० सि० भास्कर में दृष्टव्य २/४/१५९-६०	

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जिस प्रकार बाहुबली के चरित्र से प्रभावित होकर विभिन्न कवियों ने विविध कालों एवं भाषाओं में तद्विषयक साहित्य प्रणयन किया उसी प्रकार आधुनिक काल के अनेक शोध प्रज्ञों एवं कलाकारों ने बाहुबली चरित तथा तत्सम्बन्धी इतिहास, कला, संस्कृति, साहित्य, भूगोल, पुरातत्त्व, शिलालेख आदि विषयों पर शोध निबन्ध भी लिखे हैं। उनके अध्ययन से बाहुबली के जीवन के विविध अंगों पर प्रकाश पड़ता है। ऐसे निबन्धों की संख्या शताधिक है। उनमें से कुछ प्रमुख निबन्ध निम्न प्रकार हैं—

क्रम संख्या	शोध निबन्ध शीर्षक	भाषा	लेखक	जानकारी के स्रोत	विशेष
१	२	३	४	५	६
१.	जैनबिद्री अर्थात् श्रवण-बेलगोला	हिन्दी	डॉ० हीरालाल जैन	जैन सिद्धान्त भास्कर आरा (बिहार) ६/४/२०१-२०४	इस निबन्ध के अनुसार श्रवण-बेलगोल का अर्थ है जैनमुनियों का धवलसरोवर। इस लेख में लेखक ने श्रवणबेलगोल के प्राचीन इतिहास तथा चन्द्रगुप्त-चाणक्य आदि के जैन होने सम्बन्धी अनेक प्रमाण प्रस्तुत किए हैं।
२.	श्रवणबेलगोल एवं यहां की श्री गोम्मट मूर्ति	हिन्दी	पं० के० भुजबलि शास्त्री	जै० सि भा० ६/४/२०५-२१२	गोम्मट शब्द की व्युत्पत्ति पर विशेष विचार। यथा मन्मथ > गम्मह > गम्मट > गोम्मट
३.	श्रीबाहुबली की मूर्ति गोम्मट क्यों कहलाती है ?	हिन्दी	श्री गोविन्द पै	जै० सि० भा० ४/२	
४.	गोम्मट शब्द की व्याख्या	हिन्दी	डॉ० ए० एन० उपाध्ये	जै० सि० भा० ८/२/८५-९०	गोम्मट शब्द की कई दृष्टियों से व्युत्पत्ति एवं विकास का अध्ययन।
५.	श्रवणबेलगोल के शिलालेख	हिन्दी	डॉ० कामताप्रसाद जैन	जै० सि० भा० ६/४/२३३-२४१	श्रवणबेलगोल के शिलालेखों का ऐतिहासिक अध्ययन
६.	श्रवणबेलगोल के शिलालेखों में भौगोलिक नाम	हिन्दी	,, ,,	जै० सि० भा० ८/१/१०-१६ तथा ८/२/८१-८४.	
७.	श्रवणबेलगोल के शिलालेखों में कतिपय जैनाचार्य	हिन्दी	बी० आर० रामचन्द्र दीक्षित	जै० सि० भा० ८/१/३९-४३.	
८.	गोम्मट मूर्ति की प्रतिष्ठाकालीन कुण्डली का फल	हिन्दी	पं० नेमिचन्द्र जैन (डॉ० नेमिचन्द्र शास्त्री)	जै० सि० भा० ६/४/२६१-२६६.	
९.	गोम्मट स्वामी की सम्पत्ति का गिरवी रखा जाना	हिन्दी	पं० जुगल किशोर मुख्तार	जै० सि० भा० ६/४/२४२-२४४.	श्रवणबेलगोल के ताम्रपत्र लेख सं० १४० तथा मण्डप के शिलालेख सं० ८४ के आधार पर लिखित आश्चर्यचकित कर देने वाला निबन्ध। उक्त दोनों अभिलेख कन्नड़ भाषा में लिखित हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१	२	३	४	५	६
१०.	वेणुरु	हिन्दी	पं० के० भुजवलि शास्त्री	जै० सि० भा० ५/४/ २३४-२३६.	इस निबन्ध में बताया गया है कि कारकल के भैररसवंश के तत्कालीन शासक ने इम्मडि-भैरवराय वीर तिम्मण अजिल (चतुर्थ) को कारकल के गोम्मटेश की कीर्ति को बनाए रखने हेतु आदेश भेजा कि वह वेणुरु में गोम्मटेश की स्थापना न करके उसे कारकल भेज दे। किन्तु वीर तिम्मण ने उसका आदेश नहीं माना।
11.	The Mastakabhiṣeka of Gommteśwara at Śrawaṇabelgola	English (Research Paper)	Prof. M. H. Krishṇa	Jaina Antiquary Vol. V No. IV prp. 101-106.	
12.	The Date of the Consecration of the Image of the Gommaṭeśwara	English	S. Srikanṭha Shastri	Jaina Antiquary Vol. V No. IV pp. 107-114	
13.	Śrawaṅabelgola its secular importance	English	Dr. B. A. Saletore	Jaina Antiquary Vol V No. IV p.p. 115-122	
14.	Monastic life in Śrawaṇabelgola	English	R. N. Saletore	Jaina Antiquary Vol. V No. IV p.p, 123-132	
15.	Belgola and Bahubali	„	Prof. A. N. Upadhye	Jaina Antiquary Vol. V No. IV p.p. 137-140.	
16.	Śrawaṇabelgola. Its meaning and message	„	Prof. S. R. Sharma	„ „ pp. 141-143	
17.	Bahubali story in Kannada literature	„	Prof K. G. Karndangar	„ „ pp. 144-146	
18.	New studies in south Indian Jainism— Śrawaṇabelgola culture	„	Prof. B. Sheshgiri Rao.	„ „ pp. 147-162	
१९.	वीर मार्त्तण्ड चावुण्डराय	हिन्दी	पं० के० भुजबली शास्त्री	जै० सि० भा० ६/४/ २२९-२३२	श्रवणबेलगोल में ५७ फीट ऊँची बाहुबली की मूर्ति के निर्माता का प्रामाणिक जीवन वृत्त.
२०.	दक्षिण भारत के जैन वीर	हिन्दी	श्री त्रिवेणीप्रसाद	वही पृ० २४९-२५७	
२१.	दाक्षिणात्य जैनधर्म	हिन्दी	आर० ताताचार्य [हिन्दी अनु०— वर्द्धमान हेंगडे]	वही पृ० १०२-१०९	
२२.	जैनबद्री (श्रवणबेलगोल) मूलवद्री (मूडविदुरे) की चिट्ठी	हिन्दी	डॉ० कामताप्रसाद	जैन सि० भा० ५/१/५१-५४	रत्नमयी मूर्तियों का विवरण
२३.	मूडविदुरे में स्थित रत्नमयी प्रतिमाओं का विवरण	हिन्दी	पं० के० भुजबली शास्त्री	दिगम्बर जैन २५/१-२	„ „
२४.	महाबाहुर्बाहुबलि	संस्कृत ४४ पद्य	„ „	जै० सि० भा० ६/४/२४५-२४८	जिनसेनाचार्य कृत आदिपुराण के अनुसार भरत बाहुबली कथानक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संक्षेप में, बाहुबली कथा विकास की दृष्टि से यदि विचार किया जाय तो बाहुबलिचरित का मूल रूप आचार्य कुन्दकुन्द के पूर्वोक्त अष्टपाहुड में मिलता है, जो अत्यन्त संक्षिप्त है एवं जिसका दृष्टिकोण शुद्ध आध्यात्मिक है। किन्तु उसी सूत्र को लेकर परवर्ती साहित्यकारों ने अपनी-अपनी रुचियों एवं कल्पनाओं के आधार पर क्रमशः उसे विकसित किया। दूसरी सदी के आसपास विमलसूरि ने उसे कुछ विस्तार देकर भाई-भाई (भरत—बाहुबली) के युद्ध के रूप में चित्रण कर कथा को सरस एवं रोचक बनाने का प्रयत्न किया। अहिंसक दृष्टिकोण के नाते व्यर्थ के नर संहार को बचाने हेतु दृष्टि एवं-मुष्टि युद्ध की भी कल्पना की गई। इसी प्रकार बाहुबली के चरित को समुज्ज्वल बनाने हेतु ही भरत के चरित में कुछ दूषण लाने का भी प्रयत्न किया गया। वह दूषण और कुछ नहीं, केवल यही कि पराजित होने पर वे पारम्परिक मर्यादा को भंग कर बाहुबली पर अपने चक्र का प्रहार कर देते हैं।

११-१२ वीं सदी में विदेशियों ने भारत पर आक्रमण कर भारतीय जन जीवन को पर्याप्त अशान्त बना दिया था। विदेशियों से लोहा लेने के लिए अनेक प्रकार के हथियारों के आविष्कार हुए, उनमें से लाठी एवं लाठी से संयुक्त हथियार सार्वजनीन एवं प्रधान बन गए थे। बाहुबलीचरित में भी दृष्टि, मुष्टि एवं गिरा-युद्ध के साथ उक्त लाठी-युद्ध ने भी अपना स्थान बना लिया था।

१२ वीं सदी तक के साहित्य से यह ज्ञात नहीं होता कि भरत-बाहुबली का युद्ध कितने दिनों तक चला। किन्तु १३ वीं सदी में उस अभाव की भी पूर्ति कर दी गई और बताया जाने लगा की वह युद्ध १३ दिनों तक चला था। यद्यपि १७ वीं सदी के कवियों को यह युद्ध काल मान्य नहीं था। उनकी दृष्टि में वह युद्ध १२ वर्षों तक चला था। १३ वीं सदी की एक विशेषता यह भी है कि तब तक बाहुबलीचरित सम्बन्धी स्वतन्त्र रचना लेखन नहीं हो पाया था। किन्तु १३वीं सदी में बाहुबली कथा जनमानस में पर्याप्त सम्मानित स्थान बना चुकी थी। अतः लोक रुचि को ध्यान में रखकर अनेक कवियों ने लोक भाषा एवं लोक शैलियों में भी इस चरित का स्वतन्त्र-रूपेण अंकन प्रारम्भ किया, यद्यपि संस्कृत, प्राकृत एवं अन्य भाषाओं में भी उनका छिटपुट चित्रण होता रहा।

रासा शैली में रससिक्त रचना 'भरतेश्वर-बाहुबली रास' लिखी गई। अपनी दिशा में यह सर्वप्रथम स्वतन्त्र रचना कही जा सकती है।

१५ वीं सदी के महाकवि धनपाल द्वारा "बाहुबलीदेवचरिउ" नामक महाकाव्य अपभ्रंश-भाषा में सर्वप्रथम स्वतन्त्र महाकाव्य लिखा गया। इसका कथानक यद्यपि जिनसेनकृत आदिपुराण के आधार पर लिखा गया। किन्तु विविध घटनाओं को विस्तार देकर कवि ने उसे अलंकृत काव्य की कोटि में प्रतिष्ठित किया है। पश्चाद्वर्ती काव्यों में भरतेश-वैभव (रत्नाकरवर्णी) एवं 'भरत-बाहुबली महाकाव्यम्' (पुण्यकुशलगणि) भी अपने सरस एवं उत्कृष्ट काव्य सौन्दर्य के लिए प्रसिद्ध है।

जैसाकि पहले कहा जा चुका है कि प्रायः समस्त कवियों ने बाहुबली के चरित्र को सम्मुज्ज्वल बनाने हेतु भरत के चरित्र को सदोष बनाने का प्रयत्न किया है तथा पराजित होकर चक्र प्रहार करने पर उन्हें मर्यादाविहीन, विवेक विहीन होने का दोषारोपण किया गया है। किन्तु एक ऐसा विशिष्ट कवि भी हुआ, जिसने कथानक की पूर्व परम्परा का निर्वाह तो किया ही, साथ ही भरत के चरित्र को सदोष होने से भी बचा लिया। इतना ही नहीं, बाहुबली के साथ भरत के भ्रातृत्व स्नेह को प्रभावकारी बनाकर पाठकों के मन में भरत के प्रति असीम आस्था भी उत्पन्न कर दी। उस कवि का नाम है रत्नाकरवर्णी। वह कहते हैं कि विविध युद्धों में पराजित होने पर भरत को अपने भाई बाहुबली के पौरुष पर अत्यन्त गौरव का अनुभव हुआ। अतः उन्होंने बाहुबली की सेवा के निमित्त अपना चक्ररत्न भी भेज दिया। निश्चय ही कवि की यह कल्पना साहित्य क्षेत्र में अनुपम है।

इस प्रकार बाहुबली के साहित्य के अध्ययन से यह स्पष्ट हो जाता है कि उसके नायक बाहुबली का चरित उत्तरोत्तर विकसित होता गया। तद्विषयक ज्ञात एवं उपलब्ध साहित्य की मात्रा यद्यपि अभी पर्याप्त अपूर्ण ही कही जायगी क्योंकि अनेक अज्ञात अपरिचित एवं अव्यवस्थित शास्त्र भण्डारों में अनेक हस्तलिखित ग्रन्थ पड़े हुए हैं, उनमें अनेक ग्रन्थ बाहुबलीचरित सम्बन्धी भी होंगे, जिनकी चर्चा यहां शक्य नहीं। फिर भी जो ज्ञात हैं, उनका समग्र लेखा-जोखा भी एक लघु निबन्ध में सम्भव नहीं हो पा रहा है। अतः यहां मात्र ऐसी सामग्री का ही उपयोग किया गया है, जिससे कथानक-विकास पर प्रकाश पड़ सके तथा बाहुबली सम्बन्धी स्थलों एवं अन्य सन्दर्भों का भूगोल, इतिहास, संस्कृति, पुरातत्त्व, समाज, साहित्य एवं दर्शन की दृष्टि से भी अध्ययन किया जा सके।

मानव-मन की विविध कोटियों को उद्घाटित करने में सक्षम और कवियों की काव्य प्रतिभा को जागृत करने में समर्थ बाहुबली का जीवन सचमुच ही महान है। उस महापुरुष को लक्ष्य कर यद्यपि विशाल साहित्य का प्रणयन किया गया है किन्तु यह आश्चर्य है कि उस पर अभी तक न तो कोई समीक्षात्मक ग्रन्थ ही लिखा गया और न उच्चस्तरीय कोई शोध कार्य ही हो सका है। इस प्रकार की शोध समीक्षा न होने के कारण वीर एवं शान्तरस-प्रधान एक विशाल साहित्य अभी तक उपेक्षित एवं अपरिचित कोटि में ही किसी प्रकार जी रहा है यह स्थिति शोचनीय है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org